स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य और स्त्री विमर्श



डॉ. हेमन्त पाल घृतलहरे

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य और स्त्री विमर्श

संपादक

डॉ. हेमन्त पाल घृतलहरे

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी

शासकीय बिलासा कन्या स्नातकोत्तर

स्वशासी महाविद्यालय, बिलासपुर (छ. ग.)

सह-संपादक

डॉ. डी. एस. ठाकुर (प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

डॉ. अंजलि शर्मा (प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

डॉ. नंदिनी तिवारी (प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

डॉ. मनीष कुमार दीवान (सहायक प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

डॉ. हरिणी रानी आगर (सहायक प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

डॉ. कल्याणी जैन (सहायक प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

श्रीमती वंदना रानी खाखा (सहायक प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

शासकीय बिलासा कन्या स्नातकोत्तर
स्वशासी महाविद्यालय बिलासपुर (छत्तीसगढ़)

जे.टी.एस. पब्लिकेशन्स
दिल्ली-110053

आभार

शासकीय बिलासा कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय बिलासपुर (छत्तीसगढ़) के हिंदी विभाग में **आजादी के 75 साल और महिला सशक्तिकरण के विविध आयाम** विषय पर राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी आयोजन एवं इस पुस्तक के प्रकाशन में वित्तीय सहायता हेतु छत्तीसगढ़ शासन, उच्च शिक्षा विभाग, नया रायपुर के प्रति सादर आभार।

वैधानिक चेतावनी

पुस्तक के किसी भी अंश के प्रकाशन- फोटोकॉपी, इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों में उपयोग के लिए लेखक/ संपादक/ प्रकाशक की लिखित अनुमति आवश्यक है। पुस्तक में प्रकाशित शोध-पत्रों में निहित विचार तथा संदर्भों का संपूर्ण दायित्व स्वयं लेखकों का है। संपादक/ प्रकाशक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य और स्त्री विमर्श

संपादक

डॉ. हेमन्त पाल घृतलहरे

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी

शासकीय बिलासा कन्या स्नातकोत्तर

स्वशासी महाविद्यालय, बिलासपुर (छ. ग.)

सह-संपादक

डॉ. डी. एस. ठाकुर (प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

डॉ. अंजलि शर्मा (प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

डॉ. नंदिनी तिवारी (प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

डॉ. मनीष कुमार दीवान (सहायक प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

डॉ. हरिणी रानी आगर (सहायक प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

डॉ. कल्याणी जैन (सहायक प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

श्रीमती वंदना रानी खाखा (सहायक प्राध्यापक हिन्दी विभाग)

शासकीय बिलासा कन्या स्नातकोत्तर

स्वशासी महाविद्यालय बिलासपुर (छत्तीसगढ़)

© सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण : २०२३

ISBN 978-93-95669-18-4

मूल्य : ५००.०० रूपये

प्रकाशक

जे०टी०एस० पब्लिकेशन्स

वी-५०८, गली नं०१७, विजय पार्क, दिल्ली-११००५३

दूरभाष : ०८५२७ ४६०२५२, ०११-२२६११२२३

E-Mail : jtspublications@gmail.com

मुद्रक : तरूण ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय : डॉ. हेमन्त पाल घृतलहरे v

१. स्त्री विमर्श की अवधारणा ०१
डॉ. कमलेश सिंह नेगी

२. नारी विमर्श एक अनुशीलन ०८
डॉ.(श्रीमती) हरिणी रानी आगर, सुशील कुमार तिवारी

३. समकालीन साहित्य में नारी-विमर्श १७
डॉ. रमेशकुमार टण्डन

४. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में स्त्री २७
डॉ. प्रवीण कुमार साहू

५. हिंदी साहित्य में आधुनिक नारी ३२
सुधा कुमारी चन्द्रा, डॉ. शाहिद हुसैन

६. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में स्त्री ३८
डॉ अंजली शर्मा, बेला महंत

७. आधुनिक युग में महिला लेखन में परिवर्तन के विविध आयाम ४४
डॉ. (श्रीमती) परमजीत पाण्डेय, डॉ. (श्रीमती) उषा तिवारी

८. समकालीन कविताओं में स्त्री की वेदना, आक्रोश, प्रतिकार व प्रतिरोध ५२
डॉ. हेमन्तपाल घृतलहरे

९. स्वतंत्र भारत में स्त्री द्वारा रचित साहित्य ६५
वर्षा रानी पाटले, डॉ. स्नेहलता निर्मलकर

१०. स्वतंत्र भारत मे स्त्री द्वारा रचित नाट्य साहित्य (संस्कृत नाट्य कृतियों के संदर्भ में) ८२
प्रो. श्रीमती उत्तरा निरला, आर.के.सिंह कंवर

११. स्त्री संतो का मुखर व्यक्तित्व ९१
श्रीमती रजनी शर्मा, डॉ. उषा तिवारी, डॉ. राजेश चतुर्वेदी

१२. अवधी लोकगीतों में स्त्री सशक्तिकरण के स्वर ९९
डॉ. अजय कुमार

१३. छत्तीसगढ़ी कहानियों में नारी चेतना ११६
डॉ. हीरालाल शर्मा, शशि पाण्डेय

१४. राष्ट्र प्रेम की अभिव्यक्ति और सुभद्रा कुमारी चौहान १२०
डॉ. (श्रीमती) जयश्री शुक्ल

१५. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कथा साहित्य में आदिवासी स्त्री समाज १२९
ओंकार प्रसाद, डॉ. गिरजा शंकर गौतम

3

समकालीन साहित्य में नारी–विमर्श

डॉ. रमेशकुमार टण्डन
सहा. प्रा. (हिन्दी)
शास. महात्मा गांधी स्नातकोत्तर महावि. खरसिया

गगन गिल, अर्चना वर्मा, अनामिका, कात्यायनी, सविता सिंह, नीलेश रघुवंशी, सुनीता जैन, निर्मला गर्ग, तेजी ग्रोवर, गायत्री प्रियदर्शिनी जैसे नयी पीढ़ी की कवयित्रियों ने नारी के वजूद, अस्तित्व, आत्म स्वाभिमान आदि को एक ओर पुनर्स्थापित करते हुए हिन्दी साहित्य में लेखनी को उठाया है, तो वहीं दूसरी ओर उपभोक्तावादी व बाजारवादी विकृत संस्कृति के रखवाले समाज के विरोध में अपने आपको खड़ा भी किया है। समाज में वृद्धों की सामाजिक तिरस्कारिता, भ्रूण हत्या आदि पर भी साहित्यगत चिंता व्यक्त की गई है।

एक नारी की जीजीविषा को गगनगिल ने 'एक आवाज' कविता में बखूबी उभारते हुए कहती है कि अनेक कष्टों के बाद, जीवन में अँधेरा छा जाने के बाद भी उसमें जीवन जीने की उत्कंठा बची हुई है –

"मैं जीना चाहती हूँ।
वह कहती थी अपने से अक्सर,
मैं जीना चाहती हूँ।
दिमाग के अंधेरे में,
कुतरता था ततैया।
एक छोटी सी नस,
आता था यह स्वर वहीं से।"

पुनः गगन गिल 'एक दिन लौटेगी लड़की' कविता में दर्द से आकुल व्यथित कन्या के मनोभावों को प्रकट करती हुई लिखती है –

"एक दिन लौटेगी लड़की,
हथेली पर जीभ लेकर,

हाथ उसका लहू से लथपथ,
मुँह से टपका लहूँ, कपड़ों से सूखा हुआ।''

इस उपभोक्तावादी संसार में आज भी नारी को उपभोग की वस्तु समझा जाता है। दुनिया पूरी तरह वैज्ञानिक हो गई, नारियाँ भी वैज्ञानिक हो गईं, परन्तु बाजारवादी भावों के पोषक समाज अभी भी नारियों को एक वस्तु समझता है। ऐसे में हिन्दी कवयित्रियों को अपने वजूद की लड़ाई लड़ना ही पड़ता है –

''उसने अपने वजूद का
एक बड़ा हिस्सा
किराये पर उठाये रखा है।
दुनिया, दफ्तर, दवा–पानी
उसी आसरे चलता है,
बाकी के हिस्सों में कोई नहीं आता
उस हिस्से, इस हिस्से बीच
लेकिन है बचा हुआ अब तक,
एक पुल–धूप–हवा और कविता का।''

लोगों की शिक्षा का स्तर दिन–पर–दिन बढ़ता जा रहा है। परन्तु चारदिवारी के भीतर आज भी महिलाएँ घूटन की जिंदगी जीती हैं। बाहरी दूनिया की चकाचौंध में उनकी दिनचर्या अलग दिखती है। परन्तु चकाचौंध के हटते ही उनकी दाम्पत्यिक वास्तविकता उजागर होते देर नहीं लगती। महिला के घरेलू होने पर आपसी टकराव कम हो सकते हैं। परन्तु दोनों नौकरीपेशा हों, तो आपसी टकराव की आहट अधिक सुनाई देती है। अर्चना वर्मा की कविता 'दिनचर्या' में स्त्री–पुरूष के टकराव की स्थिति निम्न पंक्तियों में अभिव्यक्त होती है –

''आज उसने तुम्हारे गलत को गलत नहीं कहा,
बच्चे को बेबात पड़ा थप्पड़।
अपने गाल पर सहा,
औरतों की बेअक्क्ली पर
तुम्हारा लतिफा सुना।
और न सुनने का बहाना किया
बल्कि,

खुद ही जुटा दिए,
अपनी बेवकूफी के सबूत
और
तुम्हारे दंभ को सहलाया।''

महिलाओं की पीड़ा और प्रताड़ना का अंत जरूर है, लेकिन पुरानी धारणाओं के आधार पर नारियों को जो कर्त्तव्य दे दिए गए हैं, उससे पुरूष प्रधान समाज आज भी उबर नहीं पाया है। नारी गाड़ी की चालक बन गई, पुरूष रसोइया बन गया, परन्तु मुलभूत विचार ने मनुष्य जाति को जकड़ कर रखा है। तभी तो हिन्दी की कवयित्री कात्यायनी ने 'नहीं हो सकता तेरा भला' कविता में स्त्री की शारीरिक और मानसिक प्रताड़ना की अभिव्यक्ति इस प्रकार कर दी –

''वेबकूफ जाहिल औरत,
कोई कैसे करेगा तेरा भला,
अमृता शेरगिल का तूने
नाम तक नहीं सुना,
हे ईश्वर! मुझे ऐसी औरत क्यों नहीं दी,
जिसका कुछ तो भला किया जा सकता....
यह औरत तो सिर्फ भात रांध सकती है,
और
बच्चे जन सकती है।
इसे भला कैसे मुक्त किया जा सकता है।''

ठोकर खाने पर ही खुलने वाले दरवाजे से एक स्त्री की तुलना करते हुए अनामिका ने 'दरवाजा' कविता में एक स्त्री के पैर में बरसों से बँधी बेड़ियों से उद्‌गमित पीड़ा को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है –

''मैं एक दरवाजा थी,
मुझे जितना पीटा गया,
मैं उतना खुलती गई,
खुदा ने कलम रख दी,
और कहा
'औरत है' उसने यह गलत नहीं कहा।''

भ्रूण हत्या की शिकार से यदि बच गई, तो नारी कभी दहेज की बलि चढ़ जाती है, कभी उनके साथ बलात् कृत्य हो जाता है। ऐसे में यदि कोई नारी बिना कष्ट के अपने जीवन को सम्भाल ली, तब कवयित्री सविता सिंह 'नमन करूँ छोटी बेटियाँ' कविता में नारी के साहस पर अभिमान करती हुई समाज के पुरूष ठेकेदारों पर रोष व्यक्त कर व्यंग्य करती नजर आती है।

"नमन करूँ इस देश को,
जहाँ मार दी जाती हैं हर रोज
ढेर सारी औरतें,
जहाँ एक औरत का जीवित रहना
एक चमत्कार की तरह है।"

हर एक इंसान की इच्छा पुरानी परम्परा से निकलकर नीले गगन के तले स्वच्छन्द वातावरण में सांस लेने की होती है। परिवर्तन की आस लिए एक स्त्री की आकांक्षा को नीलेश रघुवंशी की कविता 'भली स्त्री' में निम्नानुसार देखा जा सकता है –

"कंकरीले पत्थर, उबड़–खाबड़ रास्ते
खट्टे–मीठे किस्से सुनते–सुनाते
घर को पीठ पर लादे,
रेल्वे पुल पर खड़ी हूँ
भर देना चाहती हूँ जीवन को यात्राओं से
तंग आ चुकी हूँ
खिड़की से आसमान देखते–देखते।"

पुनः सेवारत साधारण कर्मचारी महिलाओं की पीड़ा को नीलेश रघुवंशी अपनी कविता में स्थान देते हुए लिखते हैं –

"रहती है उदास, गिनती है दिन
तनख्वाह मिलने के
स्वप्न और दुःस्वप्न के चलते
बनेगी वह माँ
फाईलों को लेकर उतरते–चढ़ते
देखते हैं हम सब उसे
एक आशंका के साथ।"

प्रेम की वास्तविकता को अपनी कविता में प्रस्तुत करती सुनीता जैन की निम्न पंक्तियाँ, नारी की वेदना को प्रकट करती है –

"जब से वह प्रेम से जुड़ी है
जब से कांच पे खड़ी है।
न चले बनता है, न बिन चले ही
कांच को बचा ले, किरच–किरच होने से
या बचा ले पैर अपने
जब से वह प्रेम से जुड़ी है,
सचमुच, सचमुच डरी है।"

समाज नारियों से ही मर्यादा, हया, लज्जा आदि स्त्रीगत स्वभावों की अपेक्षा रखता है, मानो यही इनके ठेकेदार हों। कठोर होना नारियों के हक में नहीं, यही समाज चाहता है। समाज की दृष्टि में नारी को सुन्दर होना चाहिए। इसी बाजारवादी संस्कृति के घिनौने चक्र में पिसती नारियों पर निर्मला गर्ग लिखती है –

"लड़की तेरी बात मुलायम है,
और मुलायम बना लड़की।
तेरी त्वचा कोमल है,
और कोमल बना।
लड़की तू सुन्दर है, और सुन्दर दिख।
नित–नयी चीजें बनायी जा रही है तेरे लिए,
तेरे लिए ही तो दुनिया सजायी जा रही है।"

हर क्षेत्र में नारियाँ आगे बढ़ रही हैं। लड़कियाँ शिक्षिका से लेकर सैनिक और पायलट तक बनती जा रही हैं। परन्तु जब शादी की बात आती है, तब गुणी और काबिल लड़कियों की भी जाँच–परख बखूबी की जाती है। कन्या देखने के समय हर तरह से उसे देखा जाता है, चलने कहा जाता है, गाने कहा जाता है। यह किसी गाड़ी के बराबर के जिम्मेदार दो चक्कों में से किसी एक के साथ ज्यादती का कटु सत्य उदाहरण है। 'बड़ी होती लड़कियाँ' कविता में इसी नारियों के उत्कर्ष के साथ–साथ विवाह संबंधी वर पक्ष के नजरिए को आसानी से देखा जा सकता है –

"बड़ी होती लड़कियाँ,

सवालों का जवाब देकर
सिद्ध करती हैं कि
वे गुँगी नहीं हैं,
चल–फिर कर दिखाती हैं कि,
सही सलामत हैं उनके हाथ–पैर,
सुनाकर गीत
देती हैं अपने गले के सुरीलेपन का सबूत,
बजाकर वाद्ययंत्र दिखाती हैं कि
उन्हीं की ऊंगलियों में बसते हैं सात–सुर।''

उपभोक्तावादी संस्कृति का आभास करती लाचार लड़की के मनोभावों को व्यक्त करती पंक्तियाँ यहाँ दृष्टव्य हैं –

''धीरे–धीरे
मेरे कंधों से उतर रहा है
मेरा घर,
धीरे धीरे उतर रही है चमड़ी
मेरे ये कपड़े
मेरे सामने
घुटनों के बल बैठे
कह रहे हैं कि अब बहुत हुआ
आओ सब भूलकर नहाओ
धूल जायेगी सारी मिट्टी
फिर जो बचेगा
उसको न घर की जरूरत होगी
न ही चमड़ी की।''

नारी अस्मिता को बचाने की प्रबल पक्षधर तेजी ग्रोवर ने 'मेरे सपने में थोड़े हूँ', 'सच है', 'मैने कहा, अब नहीं', 'या फिर मुझे ठीक से पता नहीं' आदि कविताएँ लिखकर अपने मनोभावों को प्रकट किया है। उदाहरणस्वरूप कुछ पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत हैं –

''मैं तेरे सपनों में थोड़े हूँ पगली,
मैं तो बैठा हूँ टाट पर
सजूगर

अचार भरी ऊँगलियाँ चाटता।
मैं टाट पर थोड़े हूँ पगली,
झूलती खाट में
नीचे सो रहा हूँ तेरे पास।
इतना पास
कि तेरा पेट गुड़गुड़ाया,
तो मैंने सोचा मेरा है।

भले ही आज कानूनन भ्रूण परीक्षण पर प्रतिबंध है, इसके बावजूद माँ की कोख रक्तिम क्यों होती है। कहीं–न–कहीं पुरूष प्रधान समाज पुरूष की ही चाह रखता है। गायत्री प्रियदर्शिनी ने अपनी कविता 'धरती अजन्मी कविता में' भ्रूण हत्या की करुण कथा के विभत्स स्वरूप को इस प्रकार प्रस्तुत किया है –

"नहीं नम हुई कोई आँख,
जरा भी न कांपे हत्यारे हाथ।
गर्भ के अंधेरे में धंस गई कटार,
बिना ही चीखें,
तोड़ गई दम,
धरती अजन्मी एक।"

समाज में व्याप्त विद्रूपताओं, विसंगतियों आदि पर तिलमिलाती कवयित्री सुशीला टाकभौंरे के काव्य संग्रह 'स्वातिबूंद' और 'खारे मोती' तथा 'यह तुम थी' काफी चर्चित रहे हैं। इनकी विद्रोही कविता में रोष की अभिव्यंजना की झलक दिखाई देती है –

"मां बाप ने पैदा किया था गूंगा,
परिवेश ने लंगड़ा बना दिया।
चलती रही परिपाटी पर,
बैसाखियां चरमराती है।
अधिक बोझ से अकुलाकर,
विस्कारित मन हुंकारता है,
बैसाखियों को तोड़ दूं।"

वृद्धाश्रम का खुलना ही अपने आप में एक प्रमाण प्रस्तुत करता है कि देश, समाज में वृद्ध की क्या स्थिति है। जो व्यक्ति परिवार को संजोने में उम्र खपा देते हैं, वे ही परिवार में उपेक्षित रह जाते हैं। निम्न पंक्तियों में कवयित्री अनामिका, सामाजिक वास्तविकताओं पर चिंता करती हुई दिखती है –

"वृद्धाएँ धरती का नमक हैं,
किसी ने कहा था,
बच्चे ज्यादा अच्छा पलते हैं,
उनकी नन्हीं–मुन्नीं उल्टियाँ सँभालती
जागती हैं वे रात–भर।
उनके ही संग साथ से भाषा में बच्चों की
आ जाती है एक अजब कौंध,
मुहावरों, मिथक, लोकोक्तियों
लोकगीतों, लोकगाथाओं और कथा सम्यकों की।"

दिल्ली, हैदराबाद और न जाने कितने शहरों में समाज के विकृत पुरूष, महिलाओं पर बलात् कृत्य को अंजाम देते आ रहे हैं। ऐसे में साहित्यकार चुप्पी साधे नहीं रह सकता। 'अंतर्मन की हूक' कविता में साहित्यकार की पीड़ा स्पष्ट रूप से प्रकट होती है –

"जलता देश
शीला, शिल्पी, प्रियंका,
ट्विंकल और निर्भया।
आम है रेप,
कुछ दिन के चर्चे,
फिर तो पटाक्षेप।"

स्वाधीनता के बाद के समय में भी तत्कालीन साहित्यकार नारी जीवन के वास्तविक स्वरूप को साहित्य में लाने से नहीं चुकते दिखाई देते हैं। रघुवीर सहाय नारी के तत्कालीन स्थिति पर गम्भीरता से विचार कर लिखते हैं –

"नारी बिचारी है।
पुरुष की मारी,

तन से क्षुधित है,
लपक कर झपक कर,
अंत में चित है।''

स्वतंत्रता के और पीछे जाने से प्रगतिवादी कवि नागर्जुन भी नारी समानता पर कविता लिखते हुए दिखाई देते हैं –

''नर–नारी में मर्यादा बोध, सम–सम होंगे,
सम–सम होगा न्याय, सम–सम होगा विद्या–बुद्धि और विवेक,
टिक सकता है क्यों कर वहाँ प्रवाद,
जाग्रत होगी जहां परख की आंच।''

कवि अरूण कमल ने भी नारियों की सामाजिक प्रस्थिति को अपने काव्य का विषय बनाया है। वे 'एक नवजात बच्ची को प्यार' कविता में लिखते हैं –

''जिस दादी ने जूठन खाकर ही गुजार दी जिन्दगी,
जिस माँ ने अपने पति की मार चुपचाप सही।
और जिस पिता ने देखा है तिलक दहेज का,
क्रूर व्यापार वे कैसे खुश होंगे।''

महिला की सामाजिक प्रस्थिति पर कवि धूमिल भी चिंता करते हुए कविता करते हैं –

''स्त्री पूंजी है
बीड़ी से लेकर,
बिस्तर तक
विज्ञापन में फैली हुई।''

संदर्भ ग्रन्थ :–

1. संपादक डॉ. हेतु भारद्वाज : पंचशील शोध समीक्षा, त्रैमासिक हिन्दी शोध पत्रिका अंक–06।
2. वागर्थ, अंक–198, मार्च–2011, कोलकाता भारतीय भाषा परिषद।
3. संपादक राजकिशोर : ताकत का खेल (लेख) उद्धृत स्त्री के लिए जगह, रवीन्द्र वर्मा, वाणी प्रकाशन, सन् 1994 ई.।
4. संपादक संगीता आनंद : वर्तमान संदर्भ, स्त्री मुक्ति : यथार्थ और युटेपिया।

5. नगार्जुन : भूमिजा, राधा कृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, दूसरी आवृत्ति।
6. रघुवीर सहाय : कविता – नारी, रचना काल – 1954 ई.।
7. प्रदीप कुमार दास दीपक : अंतर्मन की हूक।
8. संपादक विश्वनाथ प्रसाद तिवारी : आठवें दशक की कविता, कीर्ति प्रकाशन गोरखपुर प्रथम संस्करण 1982 ई.।
9. डॉ. चमनलाल गुप्ता : ससंद से सड़क तक, सुदामा पाण्डे, धूमिल की कविता में यथार्थबोध, भावना प्रकाशन दिल्ली. प्रथम संस्करण 1990 ई.।
10. गिरीजा कुमार माथुर : भीतरी नदी की यात्रा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली।